झारखंड उच्च न्यायालय,रांची

एल.पी.ए. संख्या 313/2020

के साथ

अंतर्वर्ती आवेदन संख्या 5370/2020

चारो उरांव पुत्र स्वर्गीय लिबुआ उरांव, उम्र लगभग 54 वर्ष, ग्राम- दुरु, डाकघर और थाना- बेरो, जिला- रांची, झारखंड ... याचिकाकर्ता संख्या 5/अपीलकर्ता

बनाम

1. झारखंड राज्य

2. आयुक्त, दक्षिण छोटानागपुर डिवीजन रांची, डाकघर, जी.पी.ओ रांची, थाना कोतवाली, रांची और जिला- रांची, झारखंड

3. अतिरिक्त कलेक्टर, रांची, डाकघर, जी.पी.ओ रांची, थाना कोतवाली, रांची और जिला- रांची, झारखंड

4. विशेष अधिकारी, अनुसूचित क्षेत्र विनियमन, रांची, डाकघर जी.पी.ओ रांची, थाना कोतवाली, रांची और जिला- रांची, झारखंड

... प्रतिवादीगण

5. कालेमुन खातून पत्नी स्वर्गीय एस.के. कारू

6. एस.के. सैयद

7. एस.के. जयरात

8. एस.के. अबुजर

9. एस.के. हसबौल

10.एस. के. साबुल, क्रम संख्या 6 से 10 सभी पुत्र स्वर्गीय एस.के. कारू

11. एसके. मुबारक पुत्र स्वर्गीय एसके. इब्राहिम

12.एस.के. रशीद पुत्र स्वर्गीय एसके इब्राहिम

13.एस.के ज़हीर पुत्र ज़हीर स्वर्गीय एस.के इशाक

14.एस.के. फुलसरत पुत्र स्वर्गीय एस.के.इशाक, क्रमांक 5 से 14 सभी निवासी ग्राम- चचकोपी, डाकघर और थाना- बेरो , जिला- रांची, झारखण्ड

--------- याचिकर्तागण /प्रतिवादीगण

कोरम: माननीय श्री न्यायमूर्ति सुजीत नारायण प्रसाद

माननीय श्री न्यायमूर्ति अरुण कुमार राय

याचिकर्ता के लिए : श्री प्रशांत पल्लव, अधिवक्ता

श्री पार्थ जालान, एडवोकेट

प्रतिवादी-राज्य के लिए: श्री रत्नेश कुमार, शासकीय अधिवक्ता (एल एंड सी)-।

श्री आर. के. शाही, सहायक आदिवक्ता शासकीय अधिवक्ता (एल एंड सी)-। के लिए

10/दिनांक: 20 मार्च, 2024

1. लेटर्स पेटेंट के खंड 10 के तहत अपील इस न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा 2006 की रिट याचिका (सिविल) संख्या 6152 में पारित आदेश/निर्णय दिनांक 26.05.2020 के खिलाफ निर्देशित है, जिसके तहत अपीलीय प्राधिकारी द्वारा पारित आदेश दिनांक 23.06.2006 एसएआर में पारित किए गए थे । 2002-03 की अपील संख्या 202 आर 15 और आदेश दिनांक 10.10.2006 द्वारा पारित किया गया। 2006 के एसएआर संशोधन संख्या 60 में प्रतिवादी नंबर 2 को अवैध माना जाता है क्योंकि इसे तथ्यात्मक पहलू के साथ-साथ मामले के कानूनी पहलू पर विचार न करने पर पारित किया गया है, इसलिए, रद्द कर दिया गया और अलग रखा गया।

तथ्य:

2. की गई दलील के अनुसार मामले के संक्षिप्त तथ्य, जिन्हें यहां गिनाया जाना आवश्यक है, निम्नानुसार है:

ग्राम दुरू थाना बेरो जिला रांची में खाता क्रमांक 16 कुल क्षेत्रफल 12.61 एकड़ की भूमि गंगिया उरांव के पुत्र बरका जंगा उरांव के नाम दर्ज है, जिसकी निःसंतान मृत्यु हो गई। गंगिया उरांव के पुत्र बरका जुंगा उरांव की पूरी संपत्ति उनके भाई भूखा उरांव को विरासत में मिली थी। भूखा उरांव की मृत्यु के बाद एक पुत्र लिबुवा उरांव की मृत्यु हो गई, जिसे भूखा उरांव की मृत्यु के बाद गंगिया उरांव के पुत्र बरका जुंगा उरांव की संपत्ति विरासत में मिली थी और लिबुआ उरांव के दो बेटे चारो उरांव और सोमा उरांव को गंगिया उरांव के पुत्र बरका जुंगा उरांव की संपत्ति विरासत में मिली थी, जो इस मामले में अपीलकर्ता हैं।

अपीलकर्ता चारो उरांव और उनके भाई सोमा उरांव ने छोटानागपुर किरायेदारी अधिनियम की धारा 71 क के तहत एसके. कारू और अन्य के खिलाफ उप-विभागीय मजिस्ट्रेट रांची के समक्ष बहाली का मामला दायर किया, जो एसएआर केस नंबर 01/96 के रूप में दर्ज किया गया था। नोटिस दिए जाने के बावजूद वे उपस्थित नहीं हुए। इसलिए याचिकाकर्ताओं की प्रार्थना पर उपखण्ड मजिस्ट्रेट, रांची द्वारा दिनांक 17.01.1997 के आदेश द्वारा को एकपक्षीय अनुमति दी गई थी।

प्रतिवादी एसके. कारू ने अपील संख्या 11आर-15/9798 को प्राथमिकता दी, जिसे आदेश 13/01/1999 द्वारा अनुमति दी गई और मामले को विशेष अधिकारी, अनुसूचित क्षेत्र विनियमन, रांची की अदालत में वापस भेज दिया गया। एस.के. कारू और अन्य ने दावा किया कि प्लॉट नंबर 73, 85, 102, 121, 730, 190, 520 और 1077 में से 5.49 एकड़

की भूमि दर्ज किरायेदार द्वारा पूर्व भूमि स्वामी को दिनांक 16/01/1942 को आत्मसमर्पण के पंजीकृत विलेख द्वारा आत्मसमर्पण कर दी गई थी। पूर्व जमींदार ने बाद में सदा हुकुमनामा द्वारा एसके इब्राहिम के पिता एसके कारू, एसके मुबारक और एसके राशिद के पक्ष में और एसके जहीर और एसके फुलसरत के पिता एसके इशाक के नाम पर भी इसका निपटारा किया। इस प्रकार, उन्होंने वैध रूप से विचाराधीन भूमि का अधिग्रहण किया है। विशेष अधिकारी रांची ने याचिकाकर्ता चारो उरांव की 1996-97 के एसएआर केस नंबर 01 में पारित आदेश दिनांक 30.12.2002 के माध्यम से इस तथ्य की उचित सराहना किए बिना खारिज कर दिया कि कथित आत्मसमर्पण विलेख को रिकॉर्ड किए गए किरायेदार द्वारा निष्पादित नहीं किया गया था और यह पूर्व भूमि स्वामी और एसके इब्राहिम और एसके इशाक द्वारा किए गए जालसाजी के अलावा और कुछ नहीं था और यह शुरू से ही शून्य है।

अपीलकर्ता चारो उरांव ने विशेष अधिकारी द्वारा दिनांक 30.12.2002 को पारित आदेश के खिलाफ अतिरिक्त कलेक्टर रांची के समक्ष एसएआर अपील संख्या 202आर-15/02-03 के माध्यम से अपील की, जिसे दिनांक 23.06.2006 के आदेश द्वारा अनुमति दी गई थी, जिसमें पाया गया था कि कथित आत्मसमर्पण विलेख दर्ज किरायेदार बरका जुंगा उरांव पुत्र गंगिया उरांव द्वारा निष्पादित नहीं किया गया है। बल्कि उसी को दुगिया उरांव के पुत्र जुंगा उरांव द्वारा निष्पादित किया गया है। अतिरिक्त कलेक्टर ने अपील को स्वीकार कर लिया और जमीन का एक हिस्सा याचिकाकर्ता चारो उरांव को देने का आदेश दिया।

प्रतिवादी एस.के. कारू एवं अन्य ने आयुक्त दक्षिण छोटानागपुर मंडल के समक्ष पुनरीक्षण एसएआर संशोधन संख्या 60/2006 को प्राथमिकता देकर अतिरिक्त कलेक्टर रांची के आदेश को चुनौती दी, जिसे दिनांक 10/10/2006 के आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया और अतिरिक्त कलेक्टर के आदेश को बरकरार रखा गया।

व्यथित होने के कारण, प्रतिवादी संख्या 5-9 ने अपीलीय प्राधिकारी द्वारा पारित दिनांक 23.06.2006 के आदेश और पुनरीक्षण प्राधिकारी द्वारा पारित आदेश दिनांक 10.10.2006 को चुनौती देते हुए 2006 की रिट याचिका को प्राथमिकता दी, जिसकी अनुमति दी गई थी और उपरोक्त दोनों आदेशों को रद्द कर दिया गया था और अलग रखा गया था। इसलिए, तत्काल पत्र पेटेंट अपील।

3. यह तथ्यात्मक पहलू से स्पष्ट है कि अपीलकर्ता जो मूल रैयत था, जिसके पक्ष में भूमि उसके व्यक्तिगत उपयोग के लिए दी गई थी, ग्राम - दुरू में स्थित खाता नंबर 16 के प्लॉट

नंबर 5, 53, 73, 85, 102, 121, 180, 183, 190, 520, 521, 730, 807 और 1077 में 12.61 एकड़ क्षेत्र को मापने के लिए जो  थाना बैरो, जिला रांची में अवस्थित था।

4. तथ्यात्मक पहलू से यह भी स्पष्ट है कि कुल क्षेत्रफल में से पूर्वोक्त भूखंड का 549 एकड़ क्षेत्र रैयत के पक्ष में प्रारंभ में दिनांक 17.01.1997 के आदेश द्वारा बहाल किया गया था, जिसकी अनुमति दी गई थी, तथापि, आदेश एकपक्षीय था, इसलिए, निजी प्रतिवादियों ने अपील संख्या 11-आर-15/1997-98 के रूप में अपील को प्राथमिकता दी थी। अपीलीय प्राधिकारी ने इस तथ्य पर विचार करने के बाद कि आदेश एकपक्षीय है, मामले को विशेष अधिकारी, अनुसूचित क्षेत्र विनियमन, रांची को नए सिरे से सुनवाई के लिए भेज दिया है ताकि संबंधित प्रतिवादियों को अवसर प्रदान किया जा सके। विशेष अधिकारी, एसएआर द्वारा एसएआर केस नंबर 1/1996-97 को बहाल करके नए सिरे से कार्यवाही शुरू की गई थी, उपरोक्त बहाली आवेदन को दिनांक 30.12.2002 के आदेश के तहत खारिज कर दिया गया था, जिसके खिलाफ अपील वर्तमान अपीलकर्ता द्वारा 2002-03 की एसएआर अपील संख्या 202 आर 15 के रूप में की गई थी, जिसके द्वारा विशेष अधिकारी द्वारा पारित आदेश को रद्द कर दिया गया है और अलग रखा गया है। अपीलीय प्राधिकारी द्वारा पारित आदेश से व्यथित प्रतिवादी, एसके कारू ने 2006 के एसएआर पुनरीक्षण केस संख्या 60 के रूप में पुनरीक्षण को प्राथमिकता दी थी, जिसमें पुनरीक्षण प्राधिकारी ने अपीलीय प्राधिकारी द्वारा पारित आदेश में हस्तक्षेप करने से इनकार कर दिया था। यहां प्रतिवादी अपीलीय के साथ-साथ पुनरीक्षण प्राधिकारी द्वारा पारित आदेश से व्यथित होने के कारण, 2006 की डब्ल्यूपी (सी) संख्या 6152 होने के नाते रिट याचिका को प्राथमिकता दी थी। अन्य बातों के साथ-साथ इस मुद्दे के अलावा यह आधार लिया गया था कि भूमि को दिनांक 16.01.1942 के आत्मसमर्पण के पंजीकृत विलेख के तहत आत्मसमर्पण कर दिया गया था और उसी भूमि के परिणामस्वरूप रिट याचिकाकर्ता के कब्जे में आ गया था और तब से वे भूमि के कब्जे में हैं।

5. इसलिए, सीटू साहू और अन्य बनाम झारखंड राज्य और अन्य में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय पर भरोसा करके सीमा का आधार लिया गया था , जो (2004) 4 जेएलजेआर 109 एससी में रिपोर्ट किया गया था ।

6. विद्वान एकल न्यायाधीश ने पूर्वोक्त निर्णय को ध्यान में रखते हुए और सीएनटी अधिनियम की धारा 71-क के तहत की गई शर्त पर भी विचार करने के बाद, जिसके अनुसार बहाली आवेदन उचित अवधि के भीतर दायर किया जाना है, लेकिन इसे लगभग 50

वर्ष से अधिक समय बीत जाने के बाद दायर करने पर विचार करते हुए, इसलिए, अपीलीय प्राधिकारी द्वारा पारित दिनांक 23.06.2006 को एसएआर अपील संख्या 202 आर 15/2002-03 में पारित आक्षेपित आदेश और 2006 के एसएआर संशोधन संख्या 60 में प्रतिवादी संख्या 2 द्वारा पारित आदेश दिनांक 10.10.2006 को अनुचित माना गया है और तदनुसार, दोनों आदेशों को रद्द कर दिया गया है जिसके खिलाफ वर्तमान अपील को प्राथमिकता दी गई है।

<u>अपीलकर्ता के विद्वान वकील की ओर से तर्क:</u>

7. अपीलकर्ता, मूल रैयत के विद्वान वकील श्री प्रशांत पल्लव ने प्रस्तुत किया है कि विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश इस आधार पर त्रुटि से ग्रस्त है कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा बहाली के लिए आवेदन करने के लिए कानून भी निर्धारित किया गया है जो 30 वर्ष की अवधि के भीतर किया जाना है, जिसके अनुसार माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने सीटू साहू और अन्य बनाम झारखण्ड राज्य ( ऊपर वर्णित) के मामले में, माननीय उच्चतम न्यायालय ने दिनांक 10-11-2010 को रिट याचिका के अनुसार, लेकिन इस निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए कि क्या बहाली के लिए आवेदन 30 वर्ष की अवधि के भीतर दायर किया गया है, पूर्वोक्त मुद्दे पर निर्णायक प्राधिकारी द्वारा विचार किया जाना आवश्यक है क्योंकि परिसीमा का मुद्दा कानून और तथ्य का मिश्रित प्रश्न है जिसका निर्णय केवल प्रमुख साक्ष्य द्वारा प्राधिकरण द्वारा किया जा सकता है लेकिन यह अपीलीय या पुनरीक्षण द्वारा पारित आदेश के अनुसार स्पष्ट होगा प्राधिकरण ने कभी भी सीमा का कोई मुद्दा नहीं उठाया था, जिसका अर्थ है, सीमा का मुद्दा जो कानून और तथ्य का मिश्रित प्रश्न है, को कभी भी एक मुद्दा नहीं माना गया था और पूर्वोक्त तथ्य की सराहना किए बिना विद्वान एकल न्यायाधीश पंजीकृत आत्मसमर्पण विलेख दिनांक 16.01.1942 की तारीख से हस्तांतरण की तारीख से निष्कर्ष पर पहुंचे हैं, जिस प्रश्न पर विचार करने की आवश्यकता थी, वह स्थानांतरण की वास्तविक तारीख थी, जिसका अर्थ है कि सीएनटी के तहत हस्तांतरण को रैयत के बेदखल होने की तारीख माना जाएगा।

8. यह निष्कर्ष पर पहुंचने के उद्देश्य से प्रस्तुत किया गया है, रैयत के बेदखली के कारण हस्तांतरण की सही तारीख, साक्ष्य का नेतृत्व करने की आवश्यकता थी लेकिन इस मुद्दे को निजी प्रतिवादीगणों द्वारा उत्तेजित नहीं किया गया था, इसलिए, अपीलीय या पुनरीक्षण प्राधिकारी के समक्ष सीमा के पूर्वोक्त मुद्दे पर निष्कर्ष पर आने का कोई अवसर नहीं था।

लेकिन विद्वान एकल न्यायाधीश ने उत्प्रेषण रिट जारी करते समय इस तथ्य को मानते हुए पूरे आदेश को रद्द कर दिया है कि सीएनटी की धारा 71-क  के तहत दायर किया गया आवेदन सीमा द्वारा वर्जित है।

9. यह आधार लिया गया है कि उत्प्रेषण रिट जारी करने का सिद्धांत उस मामले में है जब अधिकार क्षेत्र की कमी/अधिकता हो या पारित आदेश विकृति से ग्रस्त हो।

10. इसमें कोई क्षेत्राधिकार संबंधी त्रुटि नहीं बल्कि विकृति का मामला है जिसके कारण विद्वान एकल न्यायाधीश ने अपीलीय और पुनरीक्षण प्राधिकारी द्वारा पारित आदेश को रद्द कर दिया, लेकिन, पूर्वोक्त निष्कर्ष पर आने से पहले विद्वान एकल न्यायाधीश को यह विचार करना चाहिए था कि यदि यह मुद्दा अपीलीय या पुनरीक्षण प्राधिकारी के समक्ष विचार के लिए नहीं आया है, इस प्रकार, उस प्रभाव के किसी भी निष्कर्ष के अभाव में या उक्त मुद्दे पर विचार न करने के लिए ताकि मामले को विकृति के दायरे में आने पर विचार किया जा सके, लेकिन फिर भी अपीलीय और पुनरीक्षण प्राधिकारी द्वारा पारित आदेश को उत्प्रेषण रिट जारी करके रद्द कर दिया गया है।

11. आगे यह आधार लिया गया है कि अपीलकर्ता के मामले में यह है कि आत्मसमर्पण का पंजीकृत विलेख धोखाधड़ी दस्तावेज का एक टुकड़ा है क्योंकि रैयत जो यहां अपीलकर्ता है, ने यह दलील दी है कि आत्मसमर्पण के पंजीकृत विलेख में उपलब्ध हस्ताक्षर रैयतों का नहीं है।

12. उक्त दलील अपीलकर्ता रैयत द्वारा ली गई है, तो बेदखली की तारीख पर विचार करने का प्रश्न इस मुद्दे पर अधिक असर डाल रहा है और मामले के उस दृष्टिकोण में भी, विद्वान एकल न्यायाधीश को इस तथ्य पर विचार करना चाहिए था कि आक्षेपित आदेश को रद्द करते समय मामले को मूल प्राधिकारी के समक्ष भेज दिया जाए ताकि इस मुद्दे पर नए सिरे से निर्णय लिया जा सके चूंकि रैयत की हैसियत में संपत्ति रखने का सारभूत अधिकार सभी बिंदुओं को एक साथ लेकर स्थगित किया जाना चाहिए।

14. अपीलकर्ता के विद्वान वकील ने प्रस्तुत किया है कि पुनरीक्षण प्राधिकारी द्वारा पुष्टि की गई अपीलीय द्वारा पारित आदेश के अनुसरण में, विचाराधीन भूमि का कब्जा पहले ही अपीलकर्ता के पक्ष में 24.11.2006 को सौंप दिया गया है और इसके बदले रैयत द्वारा किराए का भुगतान भी किया जा रहा है, किराए की रसीदें भी जारी की गई हैं। अपीलकर्ता के विद्वान वकील ने उपरोक्त आधार के आधार पर प्रस्तुत किया है कि आक्षेपित आदेश, इसलिए, जहां तक यह मामले को बंद करने से संबंधित है, को रद्द करने की आवश्यकता

है, यह कहा जाएगा कि गुण-दोष के अलावा सीमा के मुद्दे को भी ध्यान में रखते हुए पक्षकारों के अधिकार पर निर्णय लेने के लिए मामले को विशेष अधिकारी के समक्ष भेजना उचित होगा।

<u>प्रतिवादी के विद्वान वकील की ओर से तर्क:</u>

15. प्रतिवादी की ओर से पेश शासकीय आदिवक्ता (एल एंड सी)- के विद्वान श्री रत्नेश कुमार ने आक्षेपित आदेश का बचाव किया है। उनके द्वारा यह प्रस्तुत किया गया है कि आक्षेपित आदेश में कोई दुर्बलता नहीं है क्योंकि विद्वान एकल न्यायाधीश ने (2000) 5 एससीसी 141 और सीटू साहू और अन्य बनाम झारखंड राज्य और अन्य के मामले में जय मंगल उरांव बनाम मीरा नायक (श्रीमती) और अन्य के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित अनुपात पर विचार किया है। (ऊपर वर्णित ) जिसमें सीएनटी अधिनियम की धारा 71-क के प्रावधान में निहित शब्द की व्याख्या करके कानून को "किसी भी समय" निर्धारित किया गया है, जिसकी व्याख्या उचित समय के भीतर की गई है। सीटू साहू और अन्य बनाम झारखंड राज्य और अन्य के मामले में उचित समय को नोट किया गया है। (ऊपर वर्णित ) परिसीमा अधिनियम के अनुच्छेद 65 के प्रावधान पर आधारित है।

16. उपर्युक्त सिद्धांत के आधार पर, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने यह निर्णय दिया है कि बहाली के लिए आवेदन दायर करने की अवधि 30 वर्ष होगी।

17. इसलिए, यह प्रस्तुत किया गया है कि यदि विद्वान एकल न्यायाधीश अपीलीय और पुनरीक्षण प्राधिकारी द्वारा पारित आक्षेपित आदेश को रद्द करके निष्कर्ष पर पहुंचे हैं, तो सीएनटी अधिनियम की धारा 71-क के तहत प्रदान की गई सीमा की अवधि की गणना करने और इसे 16.01.1942 से गिनने के लिए, जबकि आवेदन वर्ष 1996 में धारा 71-क के तहत दायर किया गया था जो 50 वर्ष की अवधि से परे है और यदि उस आधार पर माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पारित निर्णय का पालन किया गया है, जिसके कारण विद्वान एकल न्यायाधीश ने अपीलीय को रद्द कर दिया और पुनरीक्षण प्राधिकारी के आदेश को भी रद्द कर दिया, तो इसे अवैधता से ग्रस्त नहीं कहा जा सकता है, इसलिए, आक्षेपित आदेश में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता है।

<u>विश्लेषण:</u>

18. इस न्यायालय ने पक्षकारों के विद्वान वकीलों को सुना है, विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा आक्षेपित आदेश में दर्ज निष्कर्षों को देखा है।

19. इस न्यायालय को आगे बढ़ने से पहले, यह उल्लेख करने की आवश्यकता है कि निजी उत्तरदाताओं, रिट याचिकाकर्ताओं को इस कार्यवाही के लिए प्रतिवादी संख्या 5-14 के रूप में प्रस्तुत किया गया है। दिनांक 25.04.2023 के आदेश से ऐसा प्रतीत होता है कि प्रतिवादी संख्या 5-14 को ए/डी के साथ पंजीकृत कवर के साथ-साथ सामान्य प्रक्रिया के तहत नोटिस जारी किए गए थे, जिसके लिए आवश्यक वस्तुएं एक सप्ताह के भीतर दायर की जानी थीं।

प्रतिवादी-राज्य का प्रतिनिधित्व रत्नेश कुमार, विद्वान शासकीय आदिवक्ता (एल एंड सी) -I द्वारा किया जा रहा है, जिसने प्रतिवादी संख्या 1-4 की ओर से नोटिस माफ कर दिया था।

प्रतिवादी संख्या 5-14 पर नोटिस जारी करके कदम उठाए गए थे, जैसा कि दिनांक 04.05.2023 के कार्यालय नोट से स्पष्ट होगा। नोटिस सामान्य प्रक्रिया के साथ-साथ सीमा मामले और प्रवेश मामले में ए/डी के साथ पंजीकृत कवर के माध्यम से जारी किया गया है जैसा कि दिनांक 07.07.2023 के कार्यालय नोट से स्पष्ट होगा। नोटिस प्रतिवादी संख्या 6-14 द्वारा प्राप्त किए गए दिखाए गए थे, लेकिन कार्यालय नोट के अनुसार, नोटिस प्रतिवादी संख्या 6-8 की ओर से उनकी पत्नियों द्वारा प्राप्त किया गया था। जहां तक प्रतिवादी नंबर 9 पर नोटिस का संबंध है, वह उसकी बेटी को प्राप्त हुआ था। जहां तक प्रतिवादी नंबर 10 पर नोटिस का सवाल है, वह उसकी भतीजी को मिल गया है। प्रतिवादी संख्या 11 और 12 पर उनकी पोती को नोटिस प्राप्त हुआ है। प्रतिवादी संख्या 13 और 14 पर उनके पोते को नोटिस प्राप्त हुआ है

20. उक्त कार्यालय नोट का इस न्यायालय द्वारा ध्यान रखा गया था जैसा कि दिनांक 11.07.2023 के आदेश से स्पष्ट होगा। हालांकि अपीलकर्ता की ओर से प्रार्थना की गई थी कि चूंकि संबंधित उत्तरदाताओं द्वारा उनकी पत्नियों, बेटी, भतीजी, पोती और पोते द्वारा नोटिस प्राप्त किए गए हैं, इसलिए सेवा को उत्तरदाताओं को वैध रूप से सेवा देने के लिए माना जा सकता है।

21. उपरोक्त प्रतिवादीगण की ओर से उपस्थिति नहीं की गई थी, इसलिए, इस न्यायालय ने अपीलकर्ता के विद्वान वकील को पेपर प्रकाशन के लिए जाने का निर्देश देना उचित समझा।उक्त प्रतिवादीगण पर नोटिस दैनिक समाचार पत्र में प्रकाशित किया गया था और

इस आशय के लिए, 26.08.2023 को पेपर प्रकाशन को संलग्न करते हुए पूरक हलफनामा दायर किया गया था, लेकिन फिर भी, कोई उपस्थिति नहीं है।

22. हालांकि, अपीलकर्ता के विद्वान वकील ने प्रस्तुत किया है कि शायद इस कारण से कि भूमि पर कब्जा रैयतों के पक्ष में सौंप दिया गया है, अपीलकर्ता यहां है, यह प्रतिस्पर्धी निजी उत्तरदाताओं की ओर से गैर-उपस्थिति का आधार हो सकता है।

23. जैसा कि यह हो सकता है, इस न्यायालय ने 11.07.2023 को आदेश पारित किया है कि सेवा को वैध रूप से सेवा प्रदान करने के लिए माना जाता है, इसलिए, उक्त आदेश के आलोक में, इस न्यायालय का विचार है कि मामले की सुनवाई योग्यता के आधार पर की जानी है।

24. अपीलकर्ता की ओर से जो मुद्दा उठाया गया है वह इस प्रकार है:

(i) इस संबंध में कि क्या विद्वान रिट न्यायालय ने अपीलीय और पुनरीक्षण प्राधिकारी द्वारा परिसीमा के मुद्दे पर पारित आदेश को रद्द करते हुए, परिसीमा पर मुद्दे के अधिनिर्णय के उद्देश्य से मूल प्राधिकारी के समक्ष मामले को भेजे बिना न्यायसंगत और उचित कहा जा सकता है जो कानून और तथ्य का मिश्रित प्रश्न है।

(ii) इस संबंध में कि क्या अपीलीय के साथ-साथ पुनरीक्षण प्राधिकारी द्वारा पारित आदेश को रद्द करके मामले को बंद करना न्यायसंगत और उचित कहा जा सकता है जहां परिसीमा का मुद्दा मूल प्राधिकारी या अपीलीय प्राधिकारी या पुनरीक्षण प्राधिकरण के समक्ष बिल्कुल नहीं उठाया गया है, बजाय इसके कि उक्त मुद्दे पर निर्णय लेने के लिए संबंधित मूल प्राधिकारी के समक्ष मामले को भेज दिया जाए।

25. इस न्यायालय ने, उपरोक्त मुद्दों का उत्तर देने के लिए, जो आपस में जुड़े हुए हैं, का विचार है कि इसका उत्तर देने से पहले, कानूनी मुद्दे को यहां संदर्भित किया जाना आवश्यक है।

26. इस तथ्य पर कोई विवाद नहीं है कि सीएनटी अधिनियम, 1908 एक लाभकारी कानून है जैसा कि इसकी प्रस्तावना से स्पष्ट है। अधिनियम का कार्यक्षेत्र और आशय अनुसूचित/गैर-अनुसूचित क्षेत्रों के रैयतों के रैयतों के अधिकार की रक्षा करना है। रैयतों को

उसमें परिभाषित किया गया है और अधिकार की रक्षा के लिए विभिन्न प्रावधान किए गए हैं। प्राथमिक प्रावधान धारा 46(1) है। जहां तक अनुसूचित क्षेत्र की भूमि का संबंध है, जिसमें यह अधिदेशित किया गया है कि भूमि केवल जनजातीय से जनजातीय को अंतरित की जा सकती है लेकिन उपायुक्त की अनुमति से यदि भूमि उसी पुलिस स्टेशन में है। धारा 46(4) गैर-अनुसूचित क्षेत्र की भूमि के बारे में बात करती है जिसके लिए धारा 46(5) भूमि की बहाली के प्रयोजन के लिए सीमा की अवधि प्रदान करना यदि भूमि उपायुक्त की अनुमति के बिना स्थानांतरित की गई है जिसे अवधि 12 वर्ष के रूप में अनिवार्य किया गया है। तैयार संदर्भ के लिए, धारा 46 के प्रावधान को निम्नानुसार पुन: प्रस्तुत किया जा रहा है:

"[46. रैयत द्वारा उनके अधिकार के हस्तांतरण पर प्रतिबंध। ( 1) किसी रैयत द्वारा अपने अधिकार का अपने धारित या उसके किसी भाग में कोई अंतरण नहीं, -

(क) किसी भी अवधि के लिए बंधक या पट्टे द्वारा व्यक्त या निहित जो किसी भी संभावित घटना में पांच साल से अधिक या हो सकता है, या

(ख) बिक्री, उपहार या किसी अन्य अनुबंध या समझौते द्वारा, किसी भी सीमा तक मान्य होगा: बशर्ते कि एक रैयत सात साल से अधिक की अवधि के लिए अपनी होल्डिंग या उसके किसी हिस्से के 'भुगुट बुंधा' बंधक में प्रवेश कर सकता है या यदि बंधक 'बिहार और उड़ीसा सहकारी समिति अधिनियम' के तहत पंजीकृत या पंजीकृत समझा जाता है, 1935 (1935 का बी एंड ओ अधिनियम VI) पंद्रह वर्ष से अधिक नहीं की किसी भी अवधि के लिए:]

परन्तु यह और कि, (क) कोई अधिभोग-रैयत, जो [अनुसूचित जनजातियों का सदस्य] है, उपायुक्त की पूर्व स्वीकृति से अपने धारण में अपने अधिकार या बिक्री, विनिमय, उपहार या वसीयत द्वारा अपने अधिकार को [किसी अन्य व्यक्ति, जो अनुसूचित जनजातियों का सदस्य है और], जो उस पुलिस स्टेशन के क्षेत्र की स्थानीय सीमाओं के भीतर निवासी है, जिसके भीतर जोत स्थित है;

(ख) कोई अधिभोगी-रैयत, जो अनुसूचित जातियों या पिछड़े वर्गों का सदस्य है, उपायुक्त की पूर्व मंजूरी से अपने धारण में या अपने धारण के किसी भाग को विक्रय, विनिमय, उपहार, वसीयत या पट्टे द्वारा किसी अन्य व्यक्ति को, जो अनुसूचित जाति का सदस्य है या, यथास्थिति, हस्तांतरित कर सकेगा, (क) क्या यह सच है कि भारतीय रिजर्व बैंक

(आरबीआई) ने कहा है कि वह पिछड़ा वर्ग (पिछड़ा वर्ग) का दर्जा प्राप्त है और जो उस जिले की स्थानीय सीमाओं के भीतर का निवासी है जिसके भीतर जोत स्थित है;

[(ग) कोई अधिभोग-रैयत, अपने धारिता या उसके किसी भाग में अपना अधिकार बिहार और उड़ीसा सहकारी समिति अधिनियम, 1935 (1935 का बिहार और उड़ीसा अधिनियम VI) के अधीन रजिस्ट्रीकृत या रजिस्ट्रीकृत समझी जाने वाली सोसायटी या बैंक को, या भारतीय स्टेट बैंक या बैंककारी कंपनी (उपक्रमों का अर्जन और अंतरण) अधिनियम की प्रथम अनुसूची के स्तंभ 2 में विनिर्दिष्ट बैंक को अंतरित कर सकेगा, (क) क्या यह सच है कि भारतीय रिजर्व बैंक (आरबीआई) ने 1970 का निर्णय लिया है (1970 का 5) या किसी ऐसी कंपनी या निगम को जिसके स्वामित्व में है या जिसमें शेयर पूंजी का इक्यावन प्रतिशत से कम राज्य सरकार या केन्द्रीय सरकार द्वारा या अंशतः राज्य सरकार द्वारा और अंशतः केन्द्रीय सरकार द्वारा धारित है और जिसकी स्थापना कृषकों को कृषि ऋण उपलब्ध कराने की दृष्टि से की गई है; और (घ) कोई भी अधिभोग-रैयत, जो अनुसूचित जनजातियों, अनुसूचित जातियों या पिछड़े वर्गों का सदस्य नहीं है, अपने धारित या उसके किसी भाग में अपने अधिकार को बिक्री, विनिमय, उपहार, वसीयत, बंधक या अन्यथा किसी अन्य व्यक्ति को हस्तांतरित कर सकता है।

(2) उपधारा (1) के अधीन अपने अधिकार का रैयत द्वारा अपने अधिकार का अंतरण भूस्वामियों के लिए बाध्यकारी होगा।

(3) उप-धारा (1) के उल्लंघन का कोई हस्तांतरण, पंजीकृत नहीं किया जाएगा या किसी भी तरह से किसी भी न्यायालय द्वारा वैध के रूप में मान्यता प्राप्त नहीं होगी, जो भी प्रयोग में, सिविल, आपराधिक या राजस्व क्षेत्राधिकार का।

[(3क) तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि में किसी बात के होते हुए भी, उपायुक्त किसी ऐसे धारण या उसके भाग से संबंधित सिविल प्रकृति के सभी वादों में आवश्यक पक्षकार होगा, जिसमें वाद का एक पक्षकार अनुसूचित जनजातियों का सदस्य है और दूसरा पक्षकार अनुसूचित जनजातियों का सदस्य नहीं है।

(4) उस अवधि की समाप्ति के बाद तीन वर्ष के भीतर या जिसे किसी रैयत ने उपधारा (1) के खंड (क) के अधीन अपने अधिकार को अपने धारित या उसके किसी भाग में अंतरित

किया है, उपायुक्त रैयत के आवेदन पर रैयत को विहित रीति से ऐसी धारिता या भाग के कब्जे में रखेगा।

[(4-क) (क) उपायुक्त, अपने स्वयं के प्रस्ताव से या किसी अधिभोगी-रैयत द्वारा, जो अनुसूचित जनजातियों का सदस्य है, इस आधार पर अंतरण को रद्द करने के लिए कि अंतरण उपधारा (1) के दूसरे परंतुक के खंड (क) के उल्लंघन में किया गया था, विहित रीति से जांच कर सकेगा ताकि यह अवधारित किया जा सके कि क्या अंतरण उप-धारा (1) के लिए दूसरा परंतुक:

बशर्ते कि उपायुक्त द्वारा इस तरह के किसी भी आवेदन पर विचार नहीं किया जाएगा जब तक कि यह अधिभोगी-किरायेदार द्वारा उसकी धारिता या उसके किसी हिस्से के हस्तांतरण की तारीख से बारह वर्ष की अवधि के भीतर दायर नहीं किया जाता है:

परन्तु यह और कि इस उपधारा के खण्ड (ख) या खण्ड (ग) के अधीन कोई आदेश पारित करने से पूर्व, उपायुक्त संबंधित पक्षों को उस मामले में सुनवाई का युक्तियुक्त अवसर देगा।

(ख) यदि इस उपधारा के खंड (क) में निर्दिष्ट जांच करने के बाद, उपायुक्त को पता चलता है कि ऐसा अंतरण करने में उपधारा (1) के दूसरे परंतुक के खंड (क) का कोई उल्लंघन नहीं हुआ था, तो वह आवेदन को अस्वीकार कर देगा और हस्तांतरणकर्ता द्वारा भुगतान किए जाने वाले हस्तांतरिती को ऐसी लागत प्रदान कर सकता है जैसा कि वह कर सकता है, मामले की परिस्थितियों में, उचित समझें।

(ग) यदि इस उपधारा के खंड (क) में निर्दिष्ट जांच करने के बाद, उपायुक्त को पता चलता है कि ऐसा स्थानांतरण उपधारा (1) के दूसरे परंतुक के खंड (क) के उल्लंघन में किया गया था, तो वह स्थानांतरण को रद्द कर देगा और हस्तांतरिती को ऐसी धारिता या उसके भाग से बाहर निकाल देगा, जैसा भी मामला हो और हस्तांतरणकर्ता को उसके कब्जे में रखेगा:

परन्तु यदि अन्तरिती ने किसी भवन या संरचना, ऐसी जोत या उसके भाग का निर्माण किया है, तो उपायुक्त, यदि अन्तरणकर्ता उसके मूल्य का संदाय करने का इच्छुक नहीं है, तो अन्तरिती को आदेश की तारीख से छह मास की अवधि के भीतर या आदेश की तारीख से दो वर्ष से अनधिक ऐसी विस्तारित अवधि के भीतर जिसे उपायुक्त अनुज्ञात करे, उसे हटाने का आदेश देगा परंतु यह और कि जहां उपायुक्त का यह समाधान हो जाता है कि अंतरिती ने छोटा नागपुर काश्तकारी (संशोधन) अधिनियम, 1969 (1969 का राष्ट्रपति

अधिनियम 4) के प्रारंभ से पहले ऐसी जोत या उसके भाग पर पर्याप्त संरचना या भवन का निर्माण किया है, तो वह इस अधिनियम के किन्हीं अन्य उपबंधों के होते हुए भी, उप-धारा (1) के दूसरे परंतुक के खंड (ए) के उल्लंघन में किए गए इस तरह के हस्तांतरण को मान्य करना, यदि हस्तांतरणकर्ता या तो अंतरणकर्ता को एक वैकल्पिक होल्डिंग या होल्डिंग का हिस्सा उपलब्ध कराता है, जैसा भी मामला हो, समकक्ष मूल्य का, आसपास के क्षेत्र में या पर्याप्त मुआवजे का भुगतान करता है जो हस्तांतरणकर्ता के पुनर्वास के लिए उपायुक्त द्वारा निर्धारित किया जाएगा।

(5) इस धारा की कोई बात किसी रैयत के अधिकार के किसी हस्तांतरण (अन्यथा अविधिमान्य) की वैधता को प्रभावित नहीं करेगी या उसके किसी भाग को छोटा नागपुर डिवीजन में जनवरी 1908 के पहले दिन से पहले 'मानभूम' जिले को छोड़कर, या 'मनभूम' जिले में जनवरी 1909 के पहले दिन से पहले किया गया था। [(6) इस धारा में [और धारा 47 में], -

(क) "अनुसूचित जातियां" से ऐसी जातियां, मूलवंशयां या जनजातियां अभिप्रेत हैं जो संविधान (अनुसूचित जातियां) आदेश, 1950 की अनुसूची के भाग 2 में विनिर्दिष्ट हैं;

(ख) "अनुसूचित जनजातियां" से ऐसी जनजातियां या जनजाति समुदाय या ऐसी जनजातियों या जनजाति समुदायों के भाग या उनमें समूह अभिप्रेत हैं जो संविधान (अनुसूचित जनजातियां) आदेश, 1950 की अनुसूची के भाग 2 में विनिर्दिष्ट हैं; और

(ग) "पिछड़े वर्गीय" से नागरिकों के ऐसे वर्ग अभिप्रेत हैं जिन्हें राज्य सरकार राजपत्र में अधिसूचना द्वारा सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े घोषित करे।

27. यह एक ऐसा मामला है जहां आत्मसमर्पण का प्रश्न मुख्य मुद्दा है। संविधि द्वारा समर्पण के मुद्दे पर सीएनटी अधिनियम, 1908 की धारा 72 के अंतर्गत ध्यान दिया गया है जिसके अनुसार यह अधिदेशित किया गया है कि रैयत द्वारा भूमि को पूर्व मकान मालिक के पक्ष में अभ्यपत किया जा सकता है लेकिन 1969 के संशोधित अधिनियम के आधार पर। यह शब्द उपायुक्त की पूर्व स्वीकृति से ही डाला गया है। तैयार संदर्भ के लिए, धारा 72 के प्रावधान को निम्नानुसार पुन: प्रस्तुत किया जा रहा है:

" 72. रैयत द्वारा भूमि का समर्पण - (1) एक रैयत जो एक निश्चित अवधि के लिए पट्टे या अन्य समझौते से बाध्य नहीं है, किसी भी कृषि वर्ष के अंत में अपनी धारिता को आत्मसमर्पण कर सकता है [लिखित में उपायुक्त की पूर्व मंजूरी के साथ]।

(2) लेकिन, आत्मसमर्पण के बावजूद, रैयत आत्मसमर्पण की तारीख के बाद अगले कृषि वर्ष के लिए होल्डिंग के किराए के किसी भी नुकसान के खिलाफ जमींदार को क्षतिपूर्ति करने के लिए उत्तरदायी होगा, जब तक कि वह अपने मकान मालिक को आत्मसमर्पण करने से कम से कम चार महीने पहले, आत्मसमर्पण करने के अपने इरादे की सूचना नहीं देता।

(3) रैयत, यदि वह उचित समझे, नोटिस को उपायुक्त के न्यायालय के माध्यम से तामील करवा सकता है, जिसकी अधिकारिता में धारिता या उसका कोई भाग स्थित है।

(4) जब एक रैयत ने अपनी होल्डिंग को आत्मसमर्पण कर दिया है, तो जमींदार होल्डिंग पर प्रवेश कर सकता है और या तो इसे किसी अन्य किरायेदार को दे सकता है या इसे खुद खेती में ले सकता है।

(5) इस धारा की कोई बात ऐसी किसी व्यवस्था को प्रभावित नहीं करेगी जिसके द्वारा रैयत और उसका मकान मालिक जोत के पूरे या उसके एक हिस्से के आत्मसमर्पण की व्यवस्था कर सकते हैं [लिखित रूप में उपायुक्त की पूर्व मंजूरी के साथ।

28. अधिनियम, 1908 के अवलोकन से यह स्पष्ट होगा कि वर्ष 1969 तक भूमि की बहाली के लिए कोई विशेष प्रावधान नहीं था जिसके कारण विधानमंडल ने संशोधन अधिनियम बनाया जिसे अनुसूचित क्षेत्र विनियमन अधिनियम, 1969 के रूप में जाना जाता है। वर्ष 1969 के पूर्वोक्त अधिनियम में सीएनटी अधिनियम की धारा 71-क का प्रावधान डाला गया है। उक्त प्रावधान रैयत को भूमि की बहाली के लिए आवेदन करने का अवसर प्रदान करता है। पूर्वोक्त प्रावधान इस शब्द से शुरू होता है यदि किसी भी समय, यह उपायुक्त के ध्यान में आता है कि भूमि धारा 46 या धारा 48 या धारा 240 या अधिनियम के किसी अन्य प्रावधानों के उल्लंघन में स्थानांतरित की गई है और यदि यह उपायुक्त के ध्यान में आता है कि भूमि को उपायुक्त द्वारा वैध मंजूरी के बिना स्थानांतरित किया गया है, इसे रैयत के पक्ष में बहाल किया जाना है।

29. उपर्युक्त उपबंध में परंतुक भी शामिल है, पहला परंतुक ऐसे अंतरण के लिए है जिसे उपायुक्त की मंजूरी के बिना अंतरित किए जाने पर अमान्य माना गया है जबकि दूसरा

परंतुक अपवाद के रूप में है जिसमें यह प्रावधान किया गया है कि यदि हस्तांतरित भूमि अवैध पाई जाती है तो उसे हस्तांतरण की क्षतिपूत के अध्यधीन वैध ठहराया जा सकता है यदि निर्माण पर्याप्त प्रकृति का है वर्ष 1969 से पहले। तैयार संदर्भ के लिए, धारा 71-ए के प्रावधान को निम्नानुसार पुन: प्रस्तुत किया जा रहा है:

"71 क. विधिविरुद्ध रूप से अंतरित भूमि पर अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों को कब्जा बहाल करने की शक्ति। - यदि किसी भी समय, यह उपायुक्त के ध्यान में आता है कि रैयत या मुंडारी खूंट-कट्टीदारोर एक भुईंहारी से संबंधित भूमि का हस्तांतरण जो किसी के सदस्य हैं। अनुसूचित जनजातियां धारा 46 या धारा 48 या धारा 240 या इस अधिनियम के किसी अन्य उपबंध के उल्लंघन में या किसी कपटपूर्ण विधि द्वारा हुई हैं, जिसके अंतर्गत धोखाधड़ी और मिलीभगत से वाद में प्राप्त डिक्री भी शामिल हैं, वह अंतरण, जिसे बेदखल किए जाने का प्रस्ताव है, को युक्तियुक्त अवसर देने के पश्चात् कारण बताओ और मामले में आवश्यक जांच करने के पश्चात् मुआवजे के भुगतान के बिना ऐसी भूमि से अंतरिती को बेदखल करना और इसे हस्तांतरणकर्ता या उसके उत्तराधिकारी को वापस करना, या, यदि हस्तांतरणकर्ता या उसका उत्तराधिकारी उपलब्ध नहीं है या इस तरह के पुनर्स्थापन के लिए सहमत होने के लिए तैयार नहीं है, तो इसे एक परित्यक्त जोत के निपटान के लिए गांव की प्रथा के अनुसार अनुसूचित जनजातियों से संबंधित किसी अन्य रैयत के साथ फिर से बसाना:

परन्तु यदि अन्तरिती ने अन्तरण की तारीख से 30 वर्ष के भीतर ऐसी जोत या उसके भाग पर किसी भवन या संरचना का निर्माण किया है तो उपायुक्त, यदि अन्तरणकर्ता उसके मूल्य का संदाय करने का इच्छुक नहीं है, अन्तरिती को आदेश की तारीख से छः मास की अवधि के भीतर उसे हटाने का आदेश देगा, या आदेश की तारीख से दो वर्ष से अनधिक ऐसी विस्तारित अवधि के भीतर, जैसा कि उपायुक्त अनुज्ञात करे, जिसके असफल होने पर उपायुक्त ऐसे भवन या संरचना को हटवा सकेगा:

परन्तु यह और कि जहां उपायुक्त का यह समाधान हो जाता है कि अन्तरिती ने बिहार अनुसूचित क्षेत्र विनियम, 1969 के प्रवृत्त होने से पहले ऐसी जोत या उसके भाग पर पर्याप्त संरचना या भवन का निर्माण कर लिया है, वह, अधिनियम के किन्हीं अन्य उपबंधों के होते हुए भी, ऐसे अन्तरण को विधिमान्य कर सकेगा जहाँ अन्तरिती यथास्थिति, अन्तरणकर्ता को कोई वैकल्पिक धारिता या उसका भाग उपलब्ध कराता है, (क) क्या यह सच है कि वह आस-पास के क्षेत्र के समतुल्य मूल्य का है या हस्तांतरणकर्ता के पुनर्वास के लिए आयुक्त द्वारा अवधारित किए जाने वाले पर्याप्त प्रतिकर का भुगतान करता है;

परन्तु यह भी कि यदि जांच के पश्चात् उपायुक्त का यह समाधान हो जाता है कि अन्तरिती ने प्रतिकूल कब्जे से कोई स्वत्वाधिकार अजत कर लिया है और अन्तरित भूमि का पुनः स्थापन किया जाना चाहिए तो यथास्थिति, वह अन्तरणकर्ता या उसके उत्तराधिकारी या अन्य रैयत से यथास्थिति, उपायुक्त के पास ऐसी धनराशि जमा करने की अपेक्षा करेगा जो उपायुक्त द्वारा उस रकम को ध्यान में रखते हुए अवधारित की जाए जिसके लिए भूमि (ख) भूमि के बाजार मूल्य, जैसा भी मामला हो, भूमि के लिए किए गए किसी मुआवजे की राशि, जिसे उपायुक्त उचित और न्यायसंगत मामले, हस्तांतरित किया गया था।

30. अपीलीय या पुनरीक्षण प्राधिकरण द्वारा पारित आदेश को रद्द करते समय विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा निपटाया गया मुख्य मुद्दा परिसीमा का मुद्दा है।

31. दलील के अनुसार स्वीकृत तथ्य यह है कि 12.61 एकड़ में से 5.49 एकड़ क्षेत्र में शामिल भूमि को पूर्व जमींदार के पक्ष में दिनांक 16.01.1942 को आत्मसमर्पण के विलेख द्वारा आत्मसमर्पण करने के लिए कहा गया था, जिसे धारा 62 के प्रावधान के मद्देनजर कहा गया था, जबकि आत्मसमर्पण के बाद भूमि को पूर्व जमींदार पर निहित माना गया है जिसने उक्त भूमि का निपटान किया था। हित में पूर्ववर्ती के पक्ष में, 02.03.1946 को निजी प्रतिवादी।

32. प्रतिवादी ने सीमा के मुद्दे को उठाकर इस मुद्दे को उठाया है, जिसे 02.03.1946 से गिना जाना था, जिस तारीख को भूमि को यहां प्रतिवादी के हित में पूर्ववर्ती के पक्ष में तय करने के लिए कहा गया था।

33. अत विद्वान एकल न्यायाधीश ने जय मंगल उरांव बनाम मीरा नायक (श्रीमती) एवं अन्य के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय को लागू किया है।(ऊपर वर्णित ) और सीटू साहू और अन्य बनाम ळाराखंड राज्य और अन्य। (ऊपर वर्णित ) ने आक्षेपित आदेशों को रद्द कर दिया है।

34. इसमें जो प्रश्न विद्वान राज्य के वकील द्वारा भी स्वीकार किया गया है कि परिसीमा का मुद्दा कभी भी विचारार्थ प्रश्न नहीं था, तो प्रश्न यह है कि जब कोई न्यायालय उत्प्रेषण रिट जारी करने के क्षेत्राधिकार का प्रयोग कर रहा है और यदि इस मुद्दे पर प्रशासनिक प्राधिकारी द्वारा कार्रवाई नहीं की गई है, तो उत्प्रेषण रिट किस आधार पर जारी की जानी है। इस पर विचार किए जाने की आवश्यकता है।

जहां तक उत्प्रेषण रिट जारी करने के सिद्धांत का संबंध है, कानून अच्छी तरह से तय है, जैसा कि सैयद याकूब बनाम राधाकृष्णन, एआईआर 1964 एससी 477 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा प्रदान किया गया है । उक्त निर्णय के कंडिका  संख्या 7 को निम्नानुसार पुन: प्रस्तुत किया जा रहा है:

"अनुच्छेद 226 के तहत उत्प्रेषण रिट जारी करने में उच्च न्यायालयों के अधिकार क्षेत्र की सीमाओं के बारे में प्रश्न पर इस न्यायालय द्वारा अक्सर विचार किया गया है और इस संबंध में वास्तविक कानूनी स्थिति अब संदेह में नहीं है। अधीनस्थ न्यायालयों या अधिकरणों द्वारा किए गए क्षेत्राधिकार की त्रुटियों को सुधारने के लिए उत्प्रेषण रिट जारी की जा सकती है: ये ऐसे मामले हैं जहां आदेश अवर न्यायालयों या न्यायाधिकरणों द्वारा क्षेत्राधिकार के बिना पारित किए जाते हैं, या इससे अधिक होते हैं, या क्षेत्राधिकार का प्रयोग करने में विफलता के परिणामस्वरूप होते हैं। इसी तरह एक रिट जारी की जा सकती है जहां उस पर प्रदत्त अधिकार क्षेत्र के प्रयोग में, न्यायालय या ट्रिब्यूनल अवैध रूप से या अनुचित रूप से कार्य करता है, उदाहरण के लिए, यह आदेश से प्रभावित पक्ष को सुनवाई का अवसर दिए बिना एक प्रश्न का निर्णय करता है, या जहां विवाद से निपटने में अपनाई गई प्रक्रिया प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के विपरीत है। हालांकि, इसमें कोई संदेह नहीं है कि उत्प्रेषण की रिट जारी करने का अधिकार क्षेत्र एक पर्यवेक्षी क्षेत्राधिकार है और इसका प्रयोग करने वाला न्यायालय अपीलीय न्यायालय के रूप में कार्य करने का हकदार नहीं है। इस सीमा का अनिवार्य रूप से अर्थ है कि साक्ष्य की सराहना के परिणामस्वरूप अवर न्यायालय या न्यायाधिकरण द्वारा प्राप्त तथ्य के निष्कर्षों को रिट कार्यवाही में फिर से खोला या सवाल नहीं किया जा सकता है। कानून की एक त्रुटि जो रिकॉर्ड के चेहरे पर स्पष्ट है, उसे एक रिट द्वारा ठीक किया जा सकता है, लेकिन तथ्य की त्रुटि नहीं, हालांकि यह गंभीर प्रतीत हो सकता है। ट्रिब्यूनल द्वारा दर्ज किए गए तथ्य की खोज के संबंध में, उत्प्रेषण की एक रिट जारी की जा सकती है यदि यह दिखाया जाता है कि उक्त निष्कर्ष को रिकॉर्ड करने में, ट्रिब्यूनल ने स्वीकार्य और भौतिक साक्ष्य को स्वीकार करने से गलती से इनकार कर दिया था, या गलती से अस्वीकार्य साक्ष्य स्वीकार किया था जिसने आक्षेपित निष्कर्ष को प्रभावित किया है। इसी तरह, यदि तथ्य की खोज बिना किसी सबूत के आधार पर होती है, तो इसे कानून की त्रुटि माना जाएगा जिसे उत्प्रेषण रिट द्वारा ठीक किया जा सकता है। इस श्रेणी के मामलों से निपटने में, तथापि, हमें हमेशा यह ध्यान रखना चाहिए कि ट्रिब्यूनल द्वारा दर्ज किए गए तथ्य की खोज को इस आधार पर उत्प्रेषण रिट के लिए कार्यवाही में चुनौती नहीं दी जा सकती है कि ट्रिब्यूनल के समक्ष पेश किए गए प्रासंगिक और भौतिक साक्ष्य

आक्षेपित निष्कर्ष को बनाए रखने के लिए अपर्याप्त या अपर्याप्त थे। किसी बिंदु पर नेतृत्व किए गए साक्ष्य की पर्याप्तता या पर्याप्तता और उक्त निष्कर्ष से निकाले जाने वाले तथ्य का निष्कर्ष ट्रिब्यूनल के अनन्य अधिकार क्षेत्र के भीतर है, और उक्त बिंदुओं को रिट कोर्ट के समक्ष उत्तेजित नहीं किया जा सकता है। यह इन सीमाओं के भीतर है कि अनुच्छेद 226 के तहत उच्च न्यायालयों को उत्प्रेषण की रिट जारी करने के अधिकार क्षेत्र का वैध रूप से प्रयोग किया जा सकता है (हरि विष्णु कामथ बनाम अहमद इशाक, 1955-1 एससीआर 1104: ((एस) एआईआर 1955 एससी 233); नागेंद्र नाथ बनाम कॉमर. हिल्स डिवीजन की, 1958 एससीआर 1240: (एआईआर 1958 एससी 398) और कौशल्या देवी बनाम बचित्तर सिंह, एआईआर 1960 एससी 1168।

हरि विष्णु कामथ बनाम अहमद इशाक और अन्य, एआईआर 1955 सुप्रीम कोर्ट 233 में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने कंडिका  संख्या 21 में निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया है:

"उत्प्रेषण रिट के चरित्र और दायरे और उन शर्तों के संबंध में जिनके तहत इसे जारी किया जा सकता है, निम्नलिखित प्रस्तावों को स्थापित किया जा सकता है: (1) क्षेत्राधिकार की त्रुटियों को ठीक करने के लिए उत्प्रेषण जारी किया जाएगा, जैसे कि जब कोई अवर न्यायालय या न्यायाधिकरण क्षेत्राधिकार के बिना या उससे अधिक कार्य करता है, या इसका प्रयोग करने में विफल रहता है। (2) उत्प्रेषण रिट तब भी जारी की जाएगी जब न्यायालय या अधिकरण अपने निस्संदेह क्षेत्राधिकार का प्रयोग करते हुए अवैध रूप से कार्य करता है, जैसे कि जब वह पक्षकारों को सुनवाई का अवसर दिए बिना निर्णय लेता है, या प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन करता है। (3) न्यायालय एक पर्यवेक्षी और अपीलीय क्षेत्राधिकार के अभ्यास में उत्प्रेषण कृत्यों की रिट जारी करना। इसका एक परिणाम यह है कि न्यायालय अवर न्यायालय या न्यायाधिकरण द्वारा प्राप्त तथ्यों के निष्कर्षों की समीक्षा नहीं करेगा, भले ही वे गलत हों। यह इस सिद्धांत पर है कि एक न्यायालय जिसके पास किसी विषय-वस्तु पर अधिकार क्षेत्र है, उसके पास गलत और सही निर्णय लेने का अधिकार क्षेत्र है, और जब विधायिका उस निर्णय के खिलाफ अपील का अधिकार प्रदान करने का विकल्प नहीं चुनती है, तो यह अपने उद्देश्य और नीति को विफल कर देगा, यदि एक उच्चतर न्यायालय साक्ष्य पर मामले की फिर से सुनवाई करता है और उत्प्रेषण में अपने स्वयं के निष्कर्षों को प्रतिस्थापित करता है।

सवर्ण सिंह और अन्य बनाम पंजाब राज्य और अन्य, (1976) 2 एससीसी 868 में , उत्प्रेषण रिट जारी करने के लिए भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत रिट की शक्ति पर चर्चा करते हुए, कंडिका  संख्या 12 और 13 पर निम्नानुसार धारण करने की कृपा की गई है:

" 12. प्रचारित तर्कों से निपटने से पहले, उन सामान्य सिद्धांतों पर ध्यान देना उपयोगी होगा जो दर्शाते हैं कि उत्प्रेषण क्षेत्राधिकार की सीमाओं का प्रयोग केवल अवर न्यायालयों या न्यायाधिकरणों द्वारा किए गए क्षेत्राधिकार की त्रुटियों को सुधारने के लिए किया जा सकता है। उत्प्रेषण रिट केवल पर्यवेक्षी क्षेत्राधिकार के प्रयोग में जारी की जा सकती है जो अपीलीय क्षेत्राधिकार से अलग है। अनुच्छेद 226 के तहत विशेष क्षेत्राधिकार का प्रयोग करने वाला न्यायालय अपीलीय न्यायालय के रूप में कार्य करने का हकदार नहीं है। जैसा कि सैयद याकूब के मामले (ऊपर वर्णित ) में इस न्यायालय द्वारा इंगित किया गया था

13. एक अवर न्यायाधिकरण द्वारा दर्ज तथ्य की खोज के संबंध में, उत्प्रेषण की एक रिट केवल तभी जारी की जा सकती है जब इस तरह की खोज को रिकॉर्ड करने में, न्यायाधिकरण ने साक्ष्य पर कार्रवाई की है जो कानूनी रूप से अस्वीकार्य है, या स्वीकार्य साक्ष्य को स्वीकार करने से इनकार कर दिया है, या यदि खोज किसी भी सबूत द्वारा समर्थित नहीं है, क्योंकि ऐसे मामलों में त्रुटि कानून की त्रुटि के बराबर है। रिट क्षेत्राधिकार केवल उन मामलों तक फैला हुआ है जहां निचली अदालतों या न्यायाधिकरणों द्वारा उनके अधिकार क्षेत्र से अधिक आदेश पारित किए जाते हैं या उनके द्वारा निहित क्षेत्राधिकार का प्रयोग करने से इनकार करने के परिणामस्वरूप या वे अपने अधिकार क्षेत्र के प्रयोग में अवैध रूप से या अनुचित रूप से कार्य करते हैं जिससे न्याय की गंभीर गर्भपात होती है।

हेंज इंडिया (पी) लिमिटेड और अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य, (2012) 5 एससीसी 443 में उनके लॉर्डशिप कंडिका संख्या 66 और 67 में निम्नानुसार धारण करने की कृपा की गई है:

" 66. न्यायिक समीक्षा की शक्ति के प्रयोग से निपटने वाली अदालत विधायिका या कार्यकारी या उनके एजेंटों के लिए अपने फैसले को या तो प्रांत के भीतर के मामलों के रूप में प्रतिस्थापित नहीं करती है, और यह कि अदालत अपनी समीक्षा द्वारा "विशेषज्ञ की भावना" को प्रतिस्थापित नहीं करती है, इस न्यायालय के निर्णयों से भी काफी अच्छी तरह से तय किया गया है। ऐसे सभी मामलों में न्यायिक जांच यह पता लगाने तक सीमित है कि

क्या तथ्यों के निष्कर्षों का साक्ष्य पर उचित आधार है और क्या ऐसे निष्कर्ष देश के कानूनों के अनुरूप हैं।

67. धरंगधारा केमिकल वर्क्स लिमिटेड बनाम सौराष्ट्र राज्य में, इस न्यायालय ने माना कि तथ्य के एक प्रश्न पर एक न्यायाधिकरण का निर्णय, जिसे निर्धारित करने का अधिकार क्षेत्र है, संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत कार्यवाही में सवाल उठाने के लिए उत्तरदायी नहीं है जब तक कि इसे किसी भी सबूत द्वारा पूरी तरह से असमर्थित नहीं दिखाया जाता है। इसी आशय का दृष्टिकोण इस न्यायालय द्वारा थानसिंह नाथमल मामले में लिया गया है, जहां इस न्यायालय ने कहा कि उच्च न्यायालय आम तौर पर उन सवालों का निर्धारण नहीं करता है जिनके लिए रिट का दावा करने के अधिकार को स्थापित करने के लिए साक्ष्य की विस्तृत परीक्षा की आवश्यकता होती है।

थानसिंह बनाम कर अधीक्षक, एआईआर 1964 1419 सुप्रीम कोर्ट में , माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने यह निर्णय दिया है कि उच्च न्यायालय संयुक्त रूप से ऐसे प्रश्न का निर्धारण नहीं करता है जिसके लिए रिट का दावा करने के अधिकार को स्थापित करने के लिए साक्ष्य की विस्तृत परीक्षा की आवश्यकता होती है।

मैसर्स पेप्सिको इंडिया होल्डिंग (प्रा) लिमिटेड बनाम कृष्णकांत पाण्डेय (2015) 4 एससीसी 270 के मामले में दिनांक 10-11-2010 के दौरान भारत के उच्चतम न्यायालय ने दिनांक 10-11-2008 को निर्णय लिया था। ट्रिब्यूनल के निष्कर्ष में हस्तक्षेप के मामले में भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 और 227 के दायरे पर चर्चा करते हुए, चंदावरकर सीता रत्न राव बनाम भारत संघ और अन्य के मामले में दिए गए निर्णय पर भरोसा करते हुए उन्हें प्रसन्न किया गया है ।

आशालता एस. गुरम, (1986) 4 एससीसी 447 कंडिका -17 में निम्नानुसार है:

" 17. तथ्यों की खोज के मामले में, अदालत को संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत अपने अधिकार क्षेत्र के प्रयोग में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए। बथुतमल रायचंद ओसवाल बनाम लक्ष्मीबाई आर. टार्टा में इस न्यायालय की टिप्पणियों का संदर्भ दिया जा सकता है, जहां इस न्यायालय ने कहा था कि उच्च न्यायालय अनुच्छेद 227 के तहत अपने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करने की आड़ में खुद को अपील की अदालत में परिवर्तित नहीं कर सकता है जब विधायिका ने अपील का अधिकार नहीं दिया है। उच्च न्यायालय साक्ष्यों की जांच करके और उनकी सराहना करके तथ्यों की त्रुटियों को ठीक करने के लिए सक्षम नहीं था। न्यायालय की

ओर से बोलते हुए, भगवती, जे, जैसा कि विद्वान मुख्य न्यायाधीश थे, ने रिपोर्ट के पृष्ठ 1301 पर निम्नानुसार टिप्पणी की थी:

अपीलकर्ता द्वारा पसंद किया गया विशेष सिविल आवेदन स्वीकार्य रूप से अनुच्छेद 227 के तहत एक आवेदन था और इसलिए, यह केवल उस अनुच्छेद के तहत उच्च न्यायालय के अधिकार क्षेत्र के दायरे और दायरे पर विचार करने के लिए सामग्री है। क्या उच्च न्यायालय के पास अनुच्छेद 227 के तहत एक आवेदन में जिला न्यायालय द्वारा पहुंचे गए तथ्यों के निष्कर्षों को परेशान करने का अधिकार क्षेत्र था? यह वरयाम सिंह बनाम अमरनाथ भारत संघ के मामले में इस न्यायालय के निर्णय से अच्छी तरह से तय हो गया है

..... अनुच्छेद 227 द्वारा प्रदत्त अधीक्षण की शक्ति, जैसा कि हैरीस, मुख्य न्यायमूर्ति द्वारा डालमिया जैन बनाम सुकुमार मुखर्जी में इंगित किया गया है, का प्रयोग सबसे संयम से और केवल उपयुक्त मामलों में अधीनस्थ न्यायालयों को उनके अधिकार की सीमा के भीतर रखने के लिए किया जाना चाहिए न कि केवल त्रुटियों को सुधारने के लिए।

कानून के इस बयान को नागेंद्र नाथ बोस बनाम कॉमर में इस न्यायालय के बाद के फैसले में अनुमोदन के साथ उद्धृत किया गया था। क्या यह सच है कि उस मामले में न्यायालय की ओर से सिन्हा ने हिल्स डिवीजन के एक मामले में यह उल्लेख किया था कि:

इस प्रकार, यह स्पष्ट है कि न्यायिक या अर्ध-न्यायिक प्रकृति के आदेशों के साथ संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत न्यायिक हस्तक्षेप की शक्तियां, संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत शक्ति से अधिक नहीं हैं। अनुच्छेद 226 के तहत हस्तक्षेप की शक्ति रिकॉर्ड के चेहरे पर स्पष्ट गलती के आधार पर एक आक्षेपित आदेश को रद्द करने तक हो सकती है। लेकिन संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत, हस्तक्षेप की शक्ति यह मांग करने तक सीमित है कि न्यायाधिकरण अपने अधिकार की सीमाओं के भीतर कार्य करता है।

महाप्रबंधक, इलेक्ट्रिकल रेंगाली हाइड्रो इलेक्ट्रिक प्रोजेक्ट, उड़ीसा और अन्य बनाम गिरिधारी साहू और अन्य, (2019) 10 एससीसी 695 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने उच्च न्यायालय द्वारा उत्प्रेषण रिट जारी करने की गुंजाइश के मुद्दे पर विचार किया है और यह निर्धारित किया है कि, यदि न्यायालय द्वारा दर्ज निष्कर्ष गलत है और विकृति पर आधारित है, आदेश रद्द करने के लिए उपयुक्त है/रद्द कर दिया गया है।

35. इस प्रकार, पूर्वोक्त प्रस्ताव से यह स्पष्ट है कि उत्प्रेषण रिट केवल तभी जारी की जा सकती है जब अर्ध-न्यायिक पदाधिकारी की क्षमता में प्रशासनिक प्राधिकारी का निष्कर्ष आदेश में उपलब्ध हो ताकि उत्प्रेषण की रिट जारी करने की शक्ति का प्रयोग करने के उद्देश्य से विकृति का निर्णय किया जा सके।

36. इसके अलावा, उत्प्रेषण रिट जारी करने का आधार क्षेत्राधिकार की कमी है, लेकिन यहां, अधिकार क्षेत्र की कमी का मुद्दा मुद्दा नहीं है, बल्कि विकृति का मुद्दा है जिसके कारण विद्वान एकल न्यायाधीश ने अपीलीय द्वारा पारित आदेश के साथ-साथ पुनरीक्षण प्राधिकरण में भी हस्तक्षेप किया, इसलिए, यह न्यायालय विकृति के मुद्दे पर विचार कर रहा है।

37. विकृत शब्द की व्याख्या माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा की गई है जिसका अर्थ है कि साक्ष्य पर कोई साक्ष्य या गलत विचार नहीं किया गया है। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अरुलवेलु और अन्य बनाम राज्य [लोक अभियोजक द्वारा प्रतिनिधित्व] और अन्य, (2009) 10 एससीसी 206 में विकृत शब्द पर विस्तार से चर्चा करते हुए यह माना है कि यह निस्संदेह सत्य है कि यदि तथ्य का निष्कर्ष प्रासंगिक सामग्री की अनदेखी या बहिष्कृत करके या अप्रासंगिक सामग्री को ध्यान में रखते हुए निकाला जाता है या यदि निष्कर्ष इतने अपमानजनक रूप से तर्क की अवहेलना करता है कि वह तर्कहीनता के दोष से ग्रस्त हो जाता है विकृत होने का दोष, फिर, निष्कर्ष कानून में कमजोर हो जाता है। उक्त निर्णय के प्रासंगिक कंडिका , अर्थात, कंडिका -24, 25, 26 और 27 निम्नानुसार हैं:

"24. अभिव्यक्ति "विकृत" कई मामलों में निपटाया गया है। गया दीन बनाम हनुमान प्रसाद [(2001) 1 एससीसी 501] में इस न्यायालय ने कहा कि अभिव्यक्ति "विकृत" का अर्थ है कि अधीनस्थ प्राधिकारी के निष्कर्ष रिकॉर्ड पर लाए गए साक्ष्य द्वारा समर्थित नहीं हैं या वे कानून के खिलाफ हैं या प्रक्रियात्मक अनियमितता के दोष से पीड़ित हैं।

25. पैरी (कलकत्ता) कर्मचारी संघ बनाम पैरी एंड कंपनी लिमिटेड [एआईआर 1966 कैल 31] के मामले में न्यायालय ने कहा कि "विकृत खोज" का अर्थ है एक ऐसा निष्कर्ष जो न केवल साक्ष्य के वजन के खिलाफ है बल्कि पूरी तरह से साक्ष्य के खिलाफ है। त्रिवेणी रबर और प्लास्टिक बनाम सीसीई [1994 सप्प (3) एससीसी 665: एआईआर 1994 एससी 1341] में न्यायालय ने कहा कि यह ऐसा मामला नहीं है जहां यह कहा जा सकता है कि अधिकारियों

के निष्कर्ष बिना किसी सबूत के आधारित हैं या वे इतने विकृत हैं कि कोई भी उचित व्यक्ति उन निष्कर्षों पर नहीं पहुंचा होगा।

26. एम.एस. नारायणगौड़ा बनाम गिरिजम्मा [एआईआर 1977 कांत 58] न्यायालय ने कहा कि दलील और कानून के जानबूझकर उल्लंघन में किया गया कोई भी आदेश एक विकृत आदेश है। में मोफेट वी। गफ [(1878) 1 एलआर 1 आर 331] न्यायालय ने देखा कि एक "विकृत फैसला" को संभवतः एक के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जो न केवल सबूतों के वजन के खिलाफ है बल्कि पूरी तरह से सबूत के खिलाफ है। में गॉडफ्रे वी। गॉडफ्रे [106 एनडब्ल्यू 814] न्यायालय ने "विकृत" को गलत तरीके से परिभाषित किया, सही नहीं; दाईं ओर से विकृत; जो सही, उचित, सही आदि है, उससे दूर या विचलित होना।

27. अभिव्यक्ति "विकृत" को निम्नलिखित तरीके से विभिन्न शब्दकोशों द्वारा परिभाषित किया गया है:

1. ऑक्सफोर्ड एडवांस्ड लर्नर्स डिक्शनरी ऑफ करंट इंग्लिश, 6 वां संस्करण।

"विकृत.–जानबूझकर ऐसा व्यवहार करने का दृढ़ संकल्प दिखाना जो ज्यादातर लोगों को गलत, अस्वीकार्य या अनुचित लगता है।"

2. समकालीन अंग्रेजी का लॉन्गमैन शब्दकोश, अंतर्राष्ट्रीय संस्करण ।

विकृत–जो सामान्य और उचित है, उससे जानबूझकर हटना।

3. द न्यू ऑक्सफोर्ड डिक्शनरी ऑफ इंग्लिश, 1998 संस्करण।

विकृत - विधि (निर्णय का) साक्ष्य के भार या विधि के प्रश्न पर न्यायाधीश के निर्देश के विरुद्ध विधि (निर्णय का)।

4. द न्यू लेक्सिकन: वेबस्टर डिक्शनरी ऑफ द इंग्लिश लैंग्वेज (डीलक्स एनसाइक्लोपीडिक संस्करण।

विकृत.-जानबूझकर स्वीकृत या अपेक्षित व्यवहार या राय से विचलित होना; दुष्ट या स्वच्छंद; अड़ियल; क्रॉस या पेटुलेंट।

5. स्ट्राउड का न्यायिक शब्दकोश शब्द और वाक्यांश, 4 वां संस्करण।

"विकृत.–एक विकृत निर्णय को संभवतः एक ऐसे निर्णय के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जो न केवल साक्ष्य के वजन के खिलाफ है, बल्कि पूरी तरह से सबूत के खिलाफ है।

38. उक्त प्रस्ताव का इस मुद्दे पर असर पड़ रहा है कि यदि किसी भी मुद्दे को प्रतिवादी द्वारा परिसीमन का मुद्दा नहीं कहा गया है, तो इसे रिट क्षेत्राधिकार के स्तर पर उत्प्रेषण रिट जारी करने के उद्देश्य से आंदोलन करने की अनुमति कैसे दी जाए, जैसा कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पूर्वोक्त निर्णयों में अभिनिर्धारित किया गया है, जिसमें यह समझाया गया है कि उत्प्रेषण रिट भी जारी की जा सकती है यदि रिट न्यायालय आक्षेपित आदेश में विकृति पाता है जो आदेश के नंगे अवलोकन से स्पष्ट होगा।

39. इसके अलावा, यदि किसी मुद्दे पर कोई विचार नहीं किया जाता है, तो उस पर पक्षकारों की ओर से की गई दलील के आधार पर विचार किया जाना चाहिए ताकि इस मुद्दे को उठाया जा सके कि हालांकि बिंदुओं को उठाया गया है, लेकिन उन पर विचार नहीं किया गया है, इसलिए आदेश विकृति से ग्रस्त है।

40. इस न्यायालय ने इस निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए कि क्या परिसीमा का मुद्दा उठाया भी गया था, अपीलीय और पुनरीक्षण प्राधिकारी द्वारा पारित आदेश को पढ़ा है लेकिन इस न्यायालय ने कहीं भी यह नहीं पाया है कि परिसीमा का मुद्दा मूल प्राधिकारी या अपीलीय प्राधिकारी के समक्ष उठाया गया था।

41.उपर्युक्त तथ्य पर भी विद्वान राज्य के वकील द्वारा विवाद नहीं किया गया है।

42. इसलिए, इस न्यायालय का विचार है कि विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा अपीलीय और पुनरीक्षण प्राधिकरण के आदेश को रद्द करके जो आदेश पारित किया गया है, वह विकृति के मुद्दे से संबंधित किसी भी निष्कर्ष के अभाव में उचित नहीं कहा जा सकता है।

43. इसके अतिरिक्त, जय मंगल उरांव बनाम मीरा नायक (श्रीमती) एवं अन्य (ऊपर वर्णित ) के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय की सहायता से विद्वान

एकल न्यायाधीश द्वारा इस मुद्दे पर विचार किया गया है और सीटू साहू और अन्य बनाम झारखण्ड राज्य और अन्य (ऊपर वर्णित ) के तहत एक नया मामला दर्ज किया है जिसके द्वारा यह प्रस्ताव निर्धारित किया गया है कि बहाली के लिए आवेदन 30 वर्ष की अवधि के भीतर दायर किया जाना है। तैयार संदर्भ के लिए, दोनों निर्णयों के प्रासंगिक कंडिका निम्नानुसार संदर्भित किए जा रहे हैं:

जय मंगल ओरांव बनाम  श्रीमती मीरा नायक (श्रीमती) और अन्य (ऊपर वर्णित ): में दिए गए निर्णय का कंडिका -16

" 16. यह प्रस्तुत करना कि किसी भी स्थिति में प्रतिवादियों को गैर-आदिवासी होने के नाते भूमि रखने की अनुमति नहीं दी जा सकती है और उपायुक्त केवल किसी अन्य आदिवासी को इसे आवंटित करने के लिए बाध्य है, हमारी स्वीकृति के योग्य नहीं है। उन आधारों के अलावा, जिन पर हमने अपीलकर्ता के दावे को खारिज कर दिया है, हम पाते हैं कि उच्च न्यायालय ने भूमि के विवादित चरित्र और आत्मसमर्पण किए गए ब्याज की प्रकृति के बारे में प्रश्न को खुला छोड़ दिया है, जिस पर अगर ठीक से विचार किया गया था और निर्णय लिया गया था तो इस सवाल पर प्रभाव पड़ने की संभावना थी कि मामले में वैधानिक प्रावधानों की प्रयोज्यता का सवाल क्या है। केवल इसलिए कि धारा 71-ए "यदि किसी भी समय ..." इसका अर्थ यह नहीं निकाला जा सकता है कि उन शक्तियों का प्रयोग बिना किसी समय-सीमा के किया जा सकता है, जैसा कि इस मामले में लगभग चालीस वर्षों के बाद साधारण कानून और सीमा के कानून के तहत इस बीच प्राप्त पक्षों के अधिकारों से बेपरवाह है। इसलिए, हम इन कार्यवाहियों में इस तरह के किसी भी तर्क को स्वीकार करना अनुचित मानते हैं।“

सीटू साहू और अन्य। बनाम झारखण्ड राज्य और अन्य (ऊपर वर्णित) में दिए गए निर्णय का कंडिका -14 :

"14. अब हम श्री नरसिम्हा के अंतिम तर्क की जांच करेंगे कि स्थानांतरण धोखाधड़ी थी। इस पर भी हमें डर है कि अपीलकर्ता सफल होने के हकदार हैं। हमें लेन-देन के विवरण में जाने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि हम यह भी मान सकते हैं कि हस्तांतरण धोखाधड़ी था। फिर भी, जैसा कि इब्राहिमपटनम (ऊपर वर्णित) में माना गया था, धारा 71क के तहत शक्ति का प्रयोग केवल उचित समय के भीतर ही किया जा सकता था। वर्तमान अपील के तथ्यों और परिस्थितियों को देखते हुए, इस बात से संतुष्ट नहीं हैं कि विशेष अधिकारी ने

धारा 71क  के तहत अपनी शक्तियों का प्रयोग उचित समय के भीतर किया। 40 साल का अंतराल निश्चित रूप से शक्ति के प्रयोग के लिए उचित समय नहीं है, भले ही इसे सीमा की अवधि से बचाया न जाए। हम जय मंगल उरांव मामले (ऊपर वर्णित) में इस न्यायालय द्वारा की गई टिप्पणियों से अपने विचार का समर्थन करते हैं, जो एक ऐसा मामला भी था जो कानून के उसी प्रावधान के तहत उत्पन्न हुआ था। वहां इस न्यायालय ने यह विचार किया कि धारा 46 (4) (क), जिसमें उल्लिखित किसी भी तरीके से स्थानांतरण को प्रभावित करने से पहले उपायुक्त की पूर्व मंजूरी की परिकल्पना की गई थी, केवल वर्ष 1947 (5.1.1948 से प्रभावी) में पेश की गई थी और उस मामले में आत्मसमर्पण किए जाने के प्रासंगिक समय (15.1.1942) के दौरान ऐसा कोई प्रावधान मौजूद नहीं था। जाहिर है, इसलिए, ऐसा कोई प्रावधान नहीं था 1938 में, और वही तर्क लागू होता है।

44. यहां तक कि इस तथ्य को स्वीकार करते हुए कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने परिसीमा की अवधि निर्धारित करके प्रस्ताव निर्धारित किया है और यदि इससे विद्वान एकल न्यायाधीश को अपीलीय और पुनरीक्षण प्राधिकारी द्वारा पारित आदेश में हस्तक्षेप करने के लिए प्रेरित किया जाता तो उचित तरीका यह होता कि मामले को मूल प्राधिकारी के समक्ष भेज दिया जाता ताकि संबंधित पक्ष को उक्त मुद्दे को उसके निर्णय के लिए उठाने का अवसर प्रदान किया जा सके योग्यता के आधार पर और सीमा पर भी मुद्दा।

45. उपर्युक्त कारण का निहितार्थ है क्योंकि सीटू साहू और अन्य बनाम झारखंड राज्य और अन्य के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित कानून के अनुसार सीटू साहू और अन्य बनाम झारखंड राज्य और अन्य के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित कानून के अनुसार सीटू साहू और अन्य बनाम भारत संघ और अन्य के मामले में यह निहितार्थ है कि माननीय उच्चतम न्यायालय ने सीटू साहू और अन्य बनाम भारत संघ और अन्य के मामले में क्या निर्णय लिया है। (ऊपर वर्णि ), बहाली के लिए आवेदन 30 साल की अवधि के भीतर दायर किया जाना है। 30 वर्ष की अवधि को निपटान या बेदखली की तारीख से गिना जाना है, उसी पर भी विचार करने की आवश्यकता है।

46. इसमें, वर्तमान मामले में, रैयत का मामला, अपीलकर्ता, यह है कि आत्मसमर्पण का विलेख एक धोखाधड़ी दस्तावेज के अलावा और कुछ नहीं है।

47. इसके अलावा यह आधार लिया गया है कि भूमि को 02.03.1946 को सदा हुकुमनामा के माध्यम से प्रतिवादी के हित में पूर्ववर्ती के पक्ष में तय किया गया था, इसलिए, 30 साल

की अवधि की गणना करने की अवधि की आवश्यकता है ताकि यह निष्कर्ष निकाला जा सके कि 30 साल की अवधि को किस तारीख से गिना जाना है, इस विशिष्ट तारीख से 30 साल की अवधि की गणना करने के उद्देश्य से इस निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए कि धारा 71-क के तहत दायर आवेदन सीमा द्वारा वर्जित है।

कानून के तहत आवश्यकता संबंधित पक्षों को उस संबंध में अवसर प्रदान करके साक्ष्य का नेतृत्व करना है। पूर्वोक्त अवसर केवल मूल न्यायिक प्राधिकारी के समक्ष ही प्रदान किया जा सकता है।

48. चूंकि सीएनटी अधिनियम एक लाभकारी विधान है, लेकिन रैयत के अधिकार की तुलना में सीटू साहू और अन्य बनाम झारखंड राज्य और अन्य के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित कानून को ध्यान में रखते हुए विचार किया जाना चाहिए। (ऊपर वर्णित ) जिसमें यह अनिवार्य किया गया है कि आवेदन 30 वर्षों के भीतर दायर किया जाना है जो स्वयं सुझाव देता है कि यदि कोई आवेदन 30 वर्ष की अवधि के बाद दायर किया जाएगा, तो रैयत के पक्ष में अधिकार नहीं बनाया जाएगा और इस मामले को देखते हुए, रैयत भूमि की बहाली के लिए हकदार नहीं होगा। इसलिए, रैयत और गैर-रैयत के बीच एक संतुलन बनाया जाना चाहिए जिसके लिए मामले पर नए सिरे से विचार करने की आवश्यकता है।

<u>निष्कर्ष:</u>

49. इसलिए, इस न्यायालय का विचार है कि मूल, अपीलीय और पुनरीक्षण प्राधिकरण द्वारा पारित आदेश का संबंध है, इसे रद्द करने और अलग रखने की आवश्यकता है।

इसके अलावा, जो निर्देश न्याय के अंत में कहा जाएगा, वह यह होगा कि मामले को मूल प्राधिकारी के समक्ष भेज दिया जाए ताकि इस मुद्दे को योग्यता के आधार पर नए सिरे से तय किया जा सके और साथ ही परिसीमा का मुद्दा भी उठाया जा सके।

50. तदनुसार, विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश/निर्णय को एतद्द्वारा रद्द किया जाता है और रद्द किया जाता है और मूल, अपीलीय और पुनरीक्षण प्राधिकारी द्वारा पारित आदेशों को भी रद्द किया जाता है और अलग रखा जाता है।

51.परिसीमा के मुद्दे पर तथा गुणावगुण के आधार पर भी पक्षकारों को साक्ष्य प्रस्तुत करने का अवसर प्रदान करते हुए मुद्दे पर नए सिरे से निर्णय लेने के लिए मामले को मूल प्राधिकारी के समक्ष पे्रषित किया जाता है। इस तरह की प्रक्रिया इस आदेश की प्रति प्राप्त होने/प्रस्तुत करने की तारीख से छह महीने की अवधि के भीतर पूरी की जानी है।

52. विशेष अधिकारी को निर्देश दिया जाता है कि वह मुद्दे के गुण-दोष के आधार पर स्वतंत्र निर्णय ले और सख्ती से कानून के अनुसार निर्णय ले।

53. तदनुसार, पूर्वोक्त अवलोकन और निर्देश के साथ तत्काल अपील की अनुमति दी जाती है।

54. लंबित वादकालीन आवेदन, यदि कोई हो, का भी निपटान कर दिया गया है।

(सुजीत नारायण प्रसाद, न्यायमूर्ति)

(अरुण कुमार राय, न्यायमूर्ति)

यह अनुवाद (मदन मोहन प्रिय), पैनल अनुवादक के द्वारा किया गया।